WWJMRD 2019; 5(1): 99-102
www.wwjmrd.com
International Journal
Peer Reviewed Journal
Refereed Journal
Indexed Journal
Impact Factor MJIF: 4.25
E-ISSN: 2454-6615

सुजाता गुप्ता
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
मद्रास भारत

Correspondence:
सुजाता गुप्ता
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा,
मद्रास भारत

समकालीन हिन्दी कहानियों में बदलता समाज

सुजाता गुप्ता

शोध–सारांश

समकालीन हिन्दी कहानियों में बदलती भारतीय संस्कृति उसके आधार पर, हमारी बदलती सोच को देखा जा सकता है। बदलाव का कारण आधुनिकता से आगे बढ़कर उत्तर–आधुनिकता का स्वरूप, उसका विकास–क्रम कहा गया है। इन कहानियों में हमारा समाज, व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक– विभिन्न स्तरों पर चित्रित हुआ है। आधुनिकता से बढ़कर उत्तर–आधुनिकता के कारण, संचार–क्रांति, मीडिया, मोबाइल और इन्टरनेट – ब्रेइन सभी विज्ञापित कारणों की वजह से हमारा समाज निरंतर परिवर्तितहो रहा है। 'गलोबलाइजेशन' के द्वारा हम पास तो आ गए, पूरा विश्व हमारा घर बन गया, पर हम स्वयं के परिवार, समाज और अपनों से दूर होते गए। हम आभासीय बन गए, जिसको देख तो पाते है, मगर स्वरूप ठोस नहीं रह गया। यही आभास हमारी कहानियों में भी उभरा। पति–पत्नी, माँ–बाप, चाचा–चाची, दादा–दादी, नाना–नानी इन सभी चीजों की जगह 'हम दो–हमारे दो' के नारे ने ले ली। दो कमरों का मकान हो गया, मगर लोग सिमटते चले गए। परिवार बिखर गया, 'संयुक्त' नाम 'एकल' बन गया और व्यक्ति स्वतंत्र हो गया। वह अपने जीवन में असंतुलित होता चला गया। सारे रिश्ते बेमानी हो गए। इसी प्रकार समाज में स्त्री–स्वातंत्रय ने भी अपना पक्ष रखा। आर्थिक रूप से सबल होती स्त्री है, मगर मगर वही सबल स्त्री दहेज और प्रताड़ना का भी शिकार बन जाती है। स्वतंत्रता की चाह ने उसे घर से बाहर तो निकाल दिया, मगर बलात्कार और शोषण ने उसकी अस्मिता को छलनी कर दिया। उत्तर–आधुनिक बदलाव की परिणति समाज और व्यक्ति दोनों को प्रभावित करती गयी और समकालीन कहानियों की भावभूमि बनती गयी।

Keywords: उत्तर–आधुनिकता, संचार क्रांति, इन्टरनेट, गलोबलाइजेशन, संयुक्त परिवार, एकल परिवार, हम दो–हमारे दो, स्त्री–स्वातंत्रय, दहेज, शोषण।

Introduction

रोमन दंत कथाओं में जेनस आरंभ और संक्रमण के देवता है जिनके दो सिर हैं–
एक पूर्व की ओर देखता हुआ, एक पश्चिम की ओर। आज के समय में वैश्वीकरण की स्थिति ठीक बिल्कुल ऐसी है एक दो मुँह वाला जीव जिसका एक मुँह अपरिमित शुंभकरी संभावनाओं की ओर इशारा कर रहा है, दूसरा गंभीर असोम संभावनाओं की ओर। दूसरे विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद दुनिया में बहुत से परिवर्तन हुए। युद्ध के दुष्परिणामों ने विभिन्न राष्ट्रों को एक–दूसरे के प्रति देखने को विवश किया। आदमी–आदमी के बीच जो भेदभाव और असहिष्णुता सदियों से पनपती रही है, वह मानवता के भविष्य के लिए नितांत घातक है। यह स्पष्ट रूप से अनुभव किया गया, कि दुनिया के देशों का एक दूसरे से अलग रह पाना संभव नहीं है। वह आपस में इस तरह जुड़े हैं कि घटना कहीं भी घटित हा, उसके कंपन को विश्व के हरेक कोने मे महसूस किया गया है। भारत की स्वतंत्रता को विश्व के हरेक कोने से समर्थन मिला और उपनिवेशवाद दुनिया से समाप्त हो गया।
ठीक, उसी प्रकार सारे राष्ट्रों ने यह महसूस किया कि हमारी नियति साझी है तुम्हारे भले में मेरा भला है, तुम असुरक्षित हो, तो मैं बहुत देर तक सुरक्षित नहीं रह सकता। विश्व के मनीषियों ने यह समझ किया कि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को न्याय, समता और मानवीय गरिमा के आधार पर ही विकसित करना होगा। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के पीछे यही कारण है, जिससे वैश्वीकरण का आरंभ हुआ। राजनीति के साथ–साथ विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी के क्षेत्र का अभूतपूर्व विकास हुआ। सूचना और संचार के क्षेत्र में जो अतुल्यनीय प्रगति हुई है उसने मानो धरती को एक डोर से बाँधकर रख

दिया है। वैश्वीकरण की इसी अवस्था ने हमारे हिन्दी साहित्य को भी प्रभावित किया है। इसी कारण साहित्य में आज 'गलोबलाइजेशन' जैसे शब्द की व्यापक प्रभाव हमारी हिन्दी कहानियों में भी पाया जा रहा है। जिसे हम उत्तर–आधुनिकता के नाम से जानते है। इस त्वरित बदलाव से व्यक्ति की मानसिकता लड़खड़ा गई है और समाज में विश्रृंखलता बढ़ती गई, जिसका प्रभाव हिन्दीकहानी में टूटन, बिखराव बनकर उभरा। कहानी के प्लाट और चेतना में इन्हीं पात्रों को गढ़ना पड़ा, जिस पर भूमण्डलीयकरण का प्रभाव पड़ चुका था।

आज सूचना क्रांति और टी०वी० की चपेट में आने के कारण भारतीय समाज तेजी से बदल रहा है। टी०वी० के प्रचार और इंटरनेट ने हमारे घर की निजता में सेंध लगा रखी है। इन माध्यमां के कारण व्यक्ति अपने घर तक सिमटकर रह गया है। उसके सामाजिक मेलजोल के अवसर घट गए हैं। सभी माध्यम समाज का यथार्थ प्रस्तुत करने के बजाए एक ऐश्वर्यशाली और उच्चवर्गीय जीवनशैली का कल्पना संसार परोस रहे है। जिसका मकसद उत्कृष्ट मनोरंजन के बजाए उपभोक्ता वस्तुओं का बाजार बनाना अधिक है।

रचनाकर यर्थाथ को अपनी संवेदना और व्यक्तित्व के साँचे में डालकर उसे एक नया रूप, नया अर्थ प्रदान करता है। रचनाकार समाज में रहता है। वह तथ्यों को देखकर समझकर परखकर तथा फिर जड़ तक पहुँचकर उसका विश्लेषण करता है।

रचनाकर अपनी दैनिक जीवन में प्राप्त अनुभूतियों को अपने दैनिक जीवन में महसूस करता है। फिर उसे पाठकों तक पहुँचाता है वह महत्वपूर्ण है। यह संवेदना समय के तात्कालिक प्रभाव से बनती है। समकालीन जीवन–संद्भों, मनुष्य के यथार्थ परिवेश और पति–पत्नी के यौन संबंधों के आधार पर संतान की उत्पत्ति होती है और परिवार बनता है।

परिवार ही बच्चों के प्रजनन एंव पालन–पोषण को उचित माध्यम प्रदान करता है। इसलिए दाम्पत्य–जीवन को हमारे समाज में बहुत महत्वपूर्ण मिला है। परिवार समाज की इकाई है। पारिवारिक जीवन मे सबसे पहला स्थान दाम्पत्य जीवन का ही आता है।

इंदिरा राय की कहानी 'पल भार में सच' में दाम्पत्य संवेदना का चित्र उकेरा गया है– ''संगीता को आया देख अनिल अकचका गए– 'तुम'। ''तुम कल क्यों नहीं आए थे? मेरा मन वहाँ नहीं लगा।'' पत्नी के प्यार भरे स्पष्ट संदेश से अनिल का रोम–रोम पुलकित हो गया– ''मैं वहाँ पहुँच जाता तो तुम इतनी जल्दी कैसे आती।''1

पति–पत्नि का संबंध इतना नजदीक और प्रगाढ़ होता है कि पति की प्रसन्नता–अप्रसन्नता पत्नी को तुरंत प्रभावित करती है। दोनों एक–दूसरे के सुख–दुख के भागीदार बनते हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'प्रमोशन' में इसी संवेदना को दिखलाया है। सुरेश की पत्नी उसे समझाने का प्रयास करती हुई कहती है– ''अपनी ड्यूटी करो और घर वापस आ जाओ....कुछ ऊँच–नीच हो गया तो हम क्या करेंगे?''2

कृष्णा अग्निहोत्री की 'अपने–अपने कुरूक्षेत्र' राजी सेठ, सुधा अरोड़ा आदि की कई कहानियों में दाम्पत्य–जीवन का चित्रण मिलता है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी 'गोमा हँसती है' दाम्पत्य जीवन की असली दास्तान है। किड़्ढ़ा अपनी पत्नी पर जान लुटाता था, उसे अपने साथी बली सिंह से पत्नी के सम्बन्ध पर शक करता है। उसका शक सच होता है। गोमा की निगाह बली सिंह की सम्पत्ति पर है। गर्भवती गोमा को डॉक्टर के पास दिखाने ले जाना ही बली सिंह का अपराध था। ''साली जी, यहाँ काहो की आई है? मेरे घर से उसका मन हुआ गालियाँ दें। उठाकर पटक दे गोमा को।''[3] दाऊजी झुनझुना और रूप्या दे गए हैं। लौटा देना। हम क्या नादीदे हैं? त्योहार करते हैं हमसे। यह नहीं याद रहा इस बच्चों के बाप ने खेत में कितना पसीना बहाया है।''[4] मैं अपनी खातिर कर रही हूँ सब? दाऊजी लिख देंगे तो मालिक कौन होगा? जोतेआ बोयोग कौन? आज तुम दाऊ जी की धरती समेत पूरे चालीस बीघा के मालिक हो। गंगाराम पजरेगा नहीं? अरे लोग अपने कपड़ा–लत्ता फाडेंगे। बावरे होंगे, किसी की बढ़ती देख कौन सिहाता है।''[5] और किड़्ढ़ा ही घायल बली सिंह को लादकर घर लाता है।

दाम्पत्य जीवन पर आधारित सुधा अरोड़ा की कहानी 'आधी आबादी' में प्रेम तथा दाम्पत्य में जीवन की सुंदरता है। नायिका पति–समाज सभी से उपेक्षित हो गृहस्थ जीवन में उलझी रहती है। जैसे ही वह घर छोड़कर जाने के बारे में सोचती है, वैसे ही उसका जीवन पलटता है। पति की बीमारी उसे उसके निकट ले आती है– ''उसने देखा साहब की तबियत में सुधार होने के साथ–साथ उसका वह तीन चौथाई हिस्सा भी अब सेहतमंद हो रहा था। अब भी रात भर साहब के पताने जागने के बावजूद उसकी सांसों में शिथिलता नहीं रही थी।''6

परिवारों का परंपरागत ढ़ाँचा प्रेमचन्द के ही समय में टूट गया था, अब परिवार की वह परिभाषा नहीं रह गयी, जो पहले तक समझी जीती थी। अखिलेश का नया संस्मरण 'वह जो यथार्थ था' गाँव, कस्बों और शहर की शुरूआत को पुरानी स्मृतियों में लाता है, तो वह भौंचक हो जाता है।

मेरा गाँव कस्बे से छह मील दूर पर बसा है। अतः जब भी गाँव जाना हुआ कस्बा बीच में आया। स्वभाविक है कि गाँव से लौटता, तब भी कस्बा मिलता। गाँव में हमारा घर है और शहर में हम हैं मगर कस्बे में तो केवल कस्बा है हमारा क्या है वहाँ? इसलिए कस्बे से होते हुए हम आगे बढ़ जाते थे, हां रूकते नहीं थे। यह महज रास्ता भर था। कस्बा न विकसित था न पिछड़ा वह विकासशील देश की तरह अनदेखी का शिकार था। हम शहर से आते, उसे रौंदते हुए गाँव चले जाते। गाँव से लौटते तो उसको धक्का देते हुए शहर आ जाते।''[7]

संयुक्त परिवार ''एक पारंपरिक समाज है जिसमें कुछ निश्चित सामाजिक मूल्यों एवं निश्चित जीवन शैली को स्वीकार किया है।''[8]

आज के समाज में बड़ों की उपेक्षा का कारण 'आर्थिक' नहीं बल्कि नए सामाजिक मूल्य हैं, जिसमें 'स्वतंत्रता' अधिक प्रभावी होती है। उनकी उपस्थिति पूरे परिवार की स्वतंत्रता में बाधक है, इसीलिए उनके बेटा–बेटी तथा बहू सभी के बीच विरोध का स्वर उठता है। यह अकेलापन समाज में हर जगह दिखाई देता है। घर के रिश्तों में दरारें उभरने लगती है। पूरे विश्व को ग्राम बनाने की धारणा ने व्यक्ति को अपनी संस्कृति से दूर कर दिया है। व्यक्ति ने आज के समय में ढ़ेर सारी चीजों को अपने दूर कर दिया है, ताकि वह अधिक से अधिक स्वतंत्र हो सके। अपनी संस्कृति से दूर हटने के कारण वह जीवन के तमाम पक्षों से

हटता गया जो मनुष्य के व्यवहार को संतुलित करती थी। जिस कारण व्यक्ति सबसे अधिक असुरक्षित हो गया, क्योंकि उसको सबसे अधिक सुरक्षित करने वाले सुख गायब हो चुके थे।

इन गायब हुए सूत्रों में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाले चाचा–चाची, दादा–दादी, ताऊ–ताई रिश्ते भी हैं, जिन्हें 'सिंगल पैरेंट' और स्त्री स्वतंत्रता की बलि चढ़नी पड़ी। जो परिवर्तन समाज में हो रहा है वह निश्चय ही अप्रत्याशित था, जिसे उदय प्रकाश की कहानी 'पाल गोमरा का स्कूटर' में उल्लेखनीय है– ''पत्नियाँ अपने पति को छोड़–छोड़कर भाग रही थी, क्योकि बाजार में उनके पतियों की कोई खास माँग नहीं थी। औरत बिकाऊ और मर्द कमाऊ का महान चकाचक युग आ गया था।''9

बेकारी, बेगानापन और फ्रस्टेशन ने व्यक्ति को चाहे वह नारी हो या कोई युवक सभी को अकेला कर दिया है। तरह–तरह के दवाबों को चाहे वह भीतर के हों या बाहर के उसे ला इस जगह पर खड़ा किया है, जहाँ उसका रोज की घटनाओं और संवेदनाओं से कोई सरोकार नहीं रह गया है। एक तरह से समाज दो स्तरों पर विभाजित हो गया है– एक वह जिसके पास जिंदगी जीने के तमाम उपभोग के संसाधन है और उसने अपने आपको समाज से काट लिया है। दूसरा, वह जो सामाजिक परिवर्तन के थपेड़ों से एकदम बौराआ भकुआया खड़ा है। 'तिरिछ' कहानी की शुरूआत यही से होती है– ''इस घटना का संबंध पिताजी से है। मेरे सपने से है और शहर से भी है। शहर के प्रति जो जन्मजात भय होता है, उससे भी है।''[10] संजीव ने अपनी कहानी 'आरोहण' में संयुक्त परिवार के ट्टने का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। इस कहानी में पहाड़ी जीवन का दुख ही कहानी का मूल है। भूप सिंह का भाई रू॰ सिंहघर छोड़कर चला जाता है, उसकी पत्नी भी उसका साथ छोड़ देती है। बेटा महीप माँ की मृत्यु का दोष पिता को देता है और वह घर छोड़कर चला जाता है। गाँव वाले भी उसका साथ छोड़ देते हैं पर इतनी पीड़ा और संत्रास के बाद वह पहाड़ी जिंदगी छोड़ने के लिए प्रस्तुत नहीं होता।

भकुआया खड़ा है। उदय प्रकाश की कहानी तिरिछ की शुरूआत यहीं से होती है– ''तो सुन भुइला, तूने सिर पर पहाड़ टूटने की कहावत तो मौत सुणी होगी, सुणणे में मौत भारी नहीं लगती, लेकि सच्चाई तो वो ही जाने हैं, जिस पर सचमुच का पहाड़ टूटा है। तेरे जाने के बाद अगले साल भौत बरफ गिरी। ये हिमांग पहाड़ उसका बोझ न उठा सका, धुसक गया और अपने तीस नाली खेत, मकान, माँ, बाबासब दब गए मलबे में। मैं ही किसी तरह बच गया। मैं छानी पर था, इसलिए वहीं से तबाही देखी थी मैनें लाचार, असहाय। तू होता तो पहाड़ का मलबा क्या था, पहाड़ तक हटा लेते दोनों भाई। खेत भी खींचकर निकाल लेते, माँ बाबा को भी, लेकिन नहीं हो सका। वही पहाड़ कबर बन गया सबका।..... तू पहले भी भाग चुका था मुझे अकेला छोड़कर। फिर मैं भौत भटका, भौत छटपटाया, लेकिन कहीं सहारा न मिला। सहारा देता भी कौन?''[11] आज के यथार्थ में हँसता–मुस्कुराता परिवार एक सपना बनकर रह गया है। पारिवारिक जीवन में बहुत सारी समस्याएँ हैं। चारों तरफ प्रश्न की प्रश्न है, पर समाधान और उत्तर कहीं नहीं है। अपने बच्चे का अच्छे स्कूल में एडमिशन, गैस का सिलिंडर, बैंक की लाइन, ऑफिस से घर–घर से ऑफिस दन सब में ही व्यक्ति थक कर चूर हो जाता है, जिस पर सभी जगह के भ्रष्ठाचार से व्यक्ति के लिए अपनी जरूरतें पूरा करने में बहुत मशक्कत करनी पड़ती है। महत्वकांक्षा आदमी को चैन से नहीं बैठने देती है। वह जल्दी से जल्दी सबकुछ हासिल करना चाहता है। अगर चीजें आसानी से मिल जाए तो ठीक वरना छल–प्रपंच से भी उसे गुरेज नीं है।

पारिवारिक माहौल में भी कभी–कभी ऐसी घुटन बस जाती है, जो खुलकर साँस भी नहीं लेने देती। जया जाद्वानी ने 'साक्षी' में लकवाग्रस्त स्त्री का चित्रण करते हुए उसके घुटने भरे मन को वाणी का प्रयास किया है– ''मैं अकेली खाट पर पड़ी हूँ, अकेली और बेबस..... अपने अँधेरे के साथ। ये क्या लिख दिया मेरी किस्मत में ऊपर वाले ने? यह घुटन–जलन गुस्सा नफरत। इस शरीर के अंदर सिर्फ अंधेरा है। अंदर भी.....मैंने अपने जिस्म को देखा..... काला..... मोटा..... सख्त माँस का लोथड़ा। दस साल में फेलकर तिगुना हो गया है। इसका क्या करूँ मैं।? हे भगवान्!''[12]

आज पारिवारिक जीवन में प्रतिष्ठा के बनाए रखने के लिए व्यक्ति दोहरेपन का जीवन जीता है। कहानीकार ओमप्रकाश वाल्मीकि ने अपनी कहानी 'भय' में दिनेश नामक ऐसे व्यक्ति का चित्रण किया है, जो एम॰सी॰ है किंतु समाज में मान–सम्मान प्रतिष्ठा हेतु जाति छिपाता फिरता है। ''इतने वर्षो में रामप्रसाद तिवारी ने गाली–गलौज की भाषा इस्तेमाल किया था। साथ ही भद्दी जुबान में बाबा साहेब और बापू के लिए अपशब्द कहे थे। दिनेश येसे क्षणों में चुप्पी साध लेता था।''[13]

आज के परिवेश में संयुक्त परिवार के टूटने के अनेक कारण है। नए परिवेश, परिस्थिति और मूल्यों का विघटन, नव–औपनिवशीकरण का बढ़ता प्रभाव तथा सांस्कृतिक ह्रास इनमें से प्रमुख है। वर्तमान युग के औद्योगिक विकास विशेषकर नव–औपनिवेशवाद के बढ़ते प्रभाव के फलस्वरूप गाँवों से नगरों की ओर भागने की प्रवृति ने संयुक्त परिवार के विघटन

1. हंस अगस्त 96 पृ–41

में प्रमुख भूमिका निभाई। शिक्षा के प्रचार–प्रसार ने उसे आत्मनिर्भरता दी और स्वच्छन्द जीनव–यापन की आकांक्षा ने एकल परिवार को प्रोत्साहित किया। आज परिवार का अर्थ पति–पत्नी और बच्चे रह गए हैं। यह भारतीय समाज पर औपनिवेशिक प्रवृति का सबसे बड़ा प्रहार है। बदलता परिवेश और बदलती नारी ने भी आज के सामाजिक बदलाव को हवा दी है। आज की नारी आर्थिक रूप से सबल बनना चाहती है, ताकि वह पुरूषों के मुकाबले अधिक महत्तामिले तथा सबल बने।

कहानीकार उद्यप्रकाश ने 'पॉल गोमरा का स्कूटर' में नारी शोषण की समस्या को उठाया गया है, ''और भारत की राजधानी नई दिल्ली जो तमाम परिवर्तनों का नर्व सेंटर या स्नायुकेन्द्र थी, वहाँ की घटनाएँ किसी तीसरे दर्जे के लुग्दी उपन्यास या सत्यकथा मार्का सड़क–छाप पत्रिकाओं के किस्सों से अलग नहीं थी। हर रोज वहाँ डेढ़ साल से नौ साल की उम्र की बच्चियों के साथ बलात्कार और गला घोटने की खबरे उस अखबार के दफ्तर तक पहुँचती थीं जिसमें पॉल गोमरा काम करते थे। जो खबरें नहीं पहुँचती होंगी उनकी संख्या के बारे में सिर्फ अनुमान ही लगाया जा सकता था।''[14]

यह नारी शोषण का एक पक्ष है। दूसरा पक्ष है– पति द्वारा प्रत्येक दिन बलात्कार का दंश झेलना। पत्नी की इच्छा न होने पर भी पति की हवस का शिकार बनना पड़ता है। यह स्थिति तो और भी त्रासद होती है।

दहेज एक ऐसा दानव है जो किसी भी परिवार की सुख–शाँति को पलभर में खा जाता है। माता–पिता अपनी कन्या को विवाह के समय यथाशक्ति धन–उपहार देते हैं, पर अर्थ लोभी ससुराल वाले संतुष्ट ना हो कर रोज एक नई वस्तु की माँग करते हैं, तो लड़की और उसके मायके वालों का जीवन असह्य दुख से भर उठता है। समाज में फेली इस कुप्रथा हमारे समाज की ओछी मानसिकता को दर्शाती है, साथ ना जाने कितने कोमल सपनों को इस 'दहेज' रूपी राक्षस के समक्ष कुचल दिया जाता है और बेटियां मारी जाती है।

सूर्यबाला ने अपनी कहानी 'पूर्णाहुति' में इस कुप्रथा पर विस्तार से प्रकाश डाला है। मास्टर जी अपनी बेटियां के रिश्ते के लिए जहाँ भी जाते हैं, वहीं दहेज लौभी दिखलाई पड़ते हैं, जो उनकी आर्थिक स्थिति पर पहले चर्चा करते हैं! ''.....मित्रों हितैषियों के बताए जिन–जिन संभ्रात, सुसंस्कृत कहे जाने वाले परिवारों में वह अपनी बेटी के विवाह का प्रस्ताव लेकर गया, वहाँ के लोग बेटी की शिक्षा–दिक्षा, गुण और सौंदर्य से पहले सीधे उसकी हैसियत के बारे में पूछते। उसकी जमीन–जायदाद और चल–अचल संपत्ति का ब्योरा चाहते।

सन्दर्भ सूची

1. हंस, नवम्बर 93 पृ–60–61
2. ओमप्रकाश वाल्मीकि, 'प्रमोशन', पृ–36
3. मैत्रेयी पुष्पा, गोमा हंसती है, पृ–65
4. मैत्रेयी पुष्पा, गोमा हंसती है, पृ–66
5. मैत्रेयी पुष्पा, गोमा हंसती है, पृ–67
6. हंस, जनवरी–फरवरी, 2000, पृ–66
7. अखिलेश, वह जो यथार्थ था, पृष्ठ–30
8. देवशंकर नवीन, सुशांत कुमार मिश्र, उत्तर आधुनिकता कुछ विचार, पृष्ठ 54.
9. उद्य प्रकाश, 'पॉल गोमरा का स्कूटर', पृ–37
10. उदय प्रकाश, तिरिछ, प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ–36
11. संजीव, 'आरोहण', प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ–115–16.
12. हंस अगस्त 96 पृ–41
13. ओमप्रकाश वाल्मीकि, 'भय', प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ–41
14. उद्य प्रकाश, 'पॉल गोमरा का स्कूटर', पृ०–32